The Sameeksha Global: A Multidisciplinary Journal in Hindi
Vol. 4, Issue 1 – 2020
ISSN: 2581-401X

श्रीलाल शुक्ल के कथा साहित्य में चित्रित समाज

डॉ. विनय कुमार शुक्ला[1]

[1] *सहायक प्राध्यापक (हिन्दी), शासकीय रामानुज प्रताप सिंहदेव, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैकुण्ठपुर, कोरिया (छ.ग.)*

श्रीलाल शुक्ल स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं। उनका हिन्दी साहित्य में बतौर लेखक उस समय आगमन होता है, जब भारतीय समाज एक तरफ आजादी के उत्साह में नयी उमंगे ले रहा था, दूसरी ओर विभाजन की त्रासदी से कराह रहा था। शुक्ल जी बहु मुखी प्रतिभा के धनी रचनाकार है। उपन्यास, व्यंग्य, निबंध, कहानी, शोध, समीक्षा आदि सभी क्षेत्रों में उनकी प्रतिमा सर्वविदित है, पर वे मूलतः कथाकार हैं। उन्होंने सर्वप्रथम सान् 1954 में 'निकष' पत्रिका में प्रकाशित 'स्वर्णग्राम और वर्षा' नामक व्यंग्य लेख के साथ साहित्य जगत में अपनी उपस्थिति दर्ज करायी, और तब से जीवन पर्यन्त अपनी एक से एक अनूठी रचनाओं में वे तमाम सामाजिक समस्याओं से जूझते आ रहे हैं।

श्रीलाल शुक्ल का कथा-साहित्य बहु आयामी दृष्टियों एवं कथा रूपकों से सम्पन्न है, वह इसलिए क्योंकि वह स्वयं अपने जीवन में तमाम उतार-चढ़ाव से गुजरते हु ए एक प्रतिष्ठित एवं जिम्मेदार पद पर रहकर लोक सेवक की भूमिका का भी निर्वहन करते रहे हैं। यही कारण है कि उनका कथा-संसार इतना व्यापक है कि उसमें महामहिम राज्यपाल से लेकर मु ख्यमंत्री, मंत्री, जगींदार, कारिंदे, शिक्षित, अशिक्षित, अभिजन, सर्वहारा, अवर्ण, सवर्ण, दलित एवं आदिवासी आदि सभी अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं।1 यहाँ यह कहना गलत न होगा कि श्रीलाल शुक्ल का कथा संसार भद्रलोक से लेकर सड़क के आम आदमी के बहु आयामी गतिविधियों का प्रमाणिक दस्तावेज है। इस संदर्भ में यह ध्यातव्य है कि राजनीतिक स्तर पर स्वातत्र्योत्तर भारत नेहरू मॉडल एवं रोमानियत से सम्पन्न लोकलुभावन वादों में समानता, भाईचारा, सामाजिक न्याय एवं आर्थिक विषमता के समापन का स्वप्न लिए हु ए था, परन्तु छठे दशक के अंतिम तीन वर्षों तक उपर्युक्त लोकतांत्रिक मूल्यों का सत्ता प्रतिष्ठानों एवं नौकरशाहों द्वारा किस तरह माखौल उड़ाया जा रहा था, इसकी भनक कुछ भारतीय बुद्धजीवियों को लग चुकी थी, जिनमें श्रीलाल शुक्ल भी थे। अर्थात् श्रीलाल शुक्ल की कथा-दृष्टि के निर्माण में सामाजिक-राजनीतिक विसंगतियों से उपजी वेदना की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

आजादी के बाद के हिन्दुस्तान के सामाजिक-राजनीतिक जीवन की जिस विदूपता द्वारा श्रीलाल शुक्ल का कथा-संसार निर्मित हु आ, उस विदूपता को यथार्थ रूप में व्यक्त करने के लिए एक नयी भाषा,

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

नया लहजा अख्तियार करने की आवश्यकता थी। शायद शुक्ल जी इसीलिए अपने कथा-संसार की बनावट एवं बुनावट में एक नये राह की खोज करते हैं। इस खोज को वे व्यंग्य की अपेक्षा भंगिमा कहना ज्यादा पसंद करते हैं। जो लोग सिर्फ उनके व्यंग्य पर वाह-वाह करक मुग्ध होते हैं, उन्हें यह सोता भी देखना चाहिए जहाँ से यह व्यंग्य की धार निकलती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस व्यंग्य का मूल उत्स उनकी मानव के प्रति गहरी संवेदना में है। यह सर्वविदित है कि हिन्दी साहित्य में कथा-साहित्य का उद्भव भारतेन्दु युग में ही हो चुका था, बावजूद इसके प्रेमचन्द पूर्व युग के सभी उपन्यास या तो सुधारवादी थे अथवा काल्पनिक कथाओं द्वारा निर्मित आदर्शवादी। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि कथा-साहित्य में यथार्थ का आगमन प्रेमचन्द के समय में होता है। कहने का अभिप्राय यह कि पहली बार आमजन कथानक का हिस्सा बनते हैं गाँव, शहर, कस्बा, शिक्षित, अशिक्षित आदि सभी उपस्थित होते हैं। अर्थात् प्रेमचन्द ऐसे पहले कथाकार है जिनके यहाँ किसान एवं उसकी जीवन शैली, उसका सामाजिक स्तर तथा भारतीय गाँव एक मुकम्मल रूप में दिखलाई पड़ता है।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में शायद फणीश्वरनाथ रेणू का नाम लेना ज्यादा उचित होगा क्योंकि इनके यहाँ भी गाँव का जितना यथार्थ अंकन हुआ है, वह अपने आप में अनूठा है यहाँ यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि गाँव का जो पहलू प्रेमचन्द के यहाँ कम मुखरित हो पाया था, उसे रेणू ने प्रखर अभिव्यक्ति प्रदान की। इस कड़ी में अगर श्रीलाल शुक्ल को देखा जाए तो इनके कथा सृजन में ग्रामीण जीवन का अनुभव, उसका ज्ञान मूल रूप में विद्यमान है। प्रेमचन्द, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, शिव प्रसाद सिंह, रांगेय राघव, राही मासूम रजा आदि उपन्यासकारों की भाँति शुक्ल जी ने भी गाँव के परिवेश व उसकी कहानी को समूचे यथार्थ के साथ अपने उपन्यासों में अभिव्यक्ति प्रदान की है। आजादी के बाद गाँव और शहर के बीच जिस तरह की रिक्तता उपस्थित हो गयी थी उसे श्रीलाल शुक्ल ने अपने ढंग से भरने का सार्थक कोशिश की है।

श्रीलाल शुक्ल के लेखन में हमें विरूद्धों का समाहार दिखलाई पड़ता है, जो उनके उपन्यासों में सर्वत्र विद्यमान है। उनके यहाँ गाँवों का अंकन प्रेमचन्द व रेणू से थोड़ा हटकर चित्रित हुआ है कारण कि प्रेमचन्द के समय में शोषण की प्रक्रिया बड़ी साफ और सीधी थी लेकिन आजाद भारत में जमींदारी प्रथा टूटने के बाद उनमें बड़ी विसंगतियां आ गई। सामाजिक व्यवस्था और स्तर बदल जाने से उसकी प्रक्रिया भी काफी जटिल हो गयी। यही कारण था कि गाँव के बारे में रोमानियत का जो दौर चल रहा था उस पर श्रीलाल शुक्ल ने सधे हाथों से करारा प्रहार किया। उनके यहाँ का गाँव हू बहू वह गाँव नहीं है जो खेती-किसानी करता है और पारिभाषिक चौहदी में जीवनयापन करता है, बल्कि उनके यहाँ वह ग्रामीण

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

समाज भी है, जो अपनी रोजी-रोटी के चक्कर में शहर जाकर मेहनत, मजदूरी व रिक्शा खींचने पर मजबूर है। इस प्रकार देखा जाए तो उनके यहाँ ग्रामीण समाज का दायरा गाँव से शहरों तक फैला हुआ है। शुक्ल जी के यहाँ जो गाँव है वह टेसुआ बहाऊ शैली में नहीं चित्रित हुआ है, बल्कि वह समूचे काईयांपन के साथ प्रस्तुत हुआ है। ग्रामीण समाज के चित्रण हेतु श्रीलाल शुक्ल ने तरह-तरह की पद्धतियों का उपयोग किया है और उसकी तमाम ऐतिहासिक जरूरतों को समझते हुए बड़ी सूझ-बूझ के साथ हमारे सामने प्रस्तुत किया है कहने की जरूरत नहीं कि इसमें वे बहुत दूर तक सफल भी हुए है। क्योंकि विवेच्य जीवन को इन्होंने मात्र देखा सुना ही नहीं बल्कि संपूर्णता में जीया और भोगा भी है। स्वानुभूति की इसी सच्चाई के यथार्थ से इनका संपूर्ण कथा साहित्य संवलित है, उर्जस्वित है। जिसके चलते एक ओर जहाँ इनमें ग्रामीण जीवन की समस्त विद्रूपताओं को उतके नग्न यथार्थ के रूप में उघाड़ने की निर्ममता है, वहीं भावी जीवन के प्रति आस्थावान संकेत भी है। इस दृष्टि से सूनी घाटी का सूरज, अज्ञातवास, रागदरबारी, विश्रामपुर का संत एवं राग विराग आदि लेखक की सशक्त अभिव्यक्ति है, जिसमें इनकी प्रतिभा एवं चिंतन का निखार देखा जा सकता है।

श्रीलाल शुक्ल ने अपने रचनाकर्म के माध्यम से आधुनिक भारतीय समाज में व्याप्त परस्पर विरोधी तत्वों की पड़ताल करते हुए हिन्दुस्तान के सामाजिक-जीवन और उसके गाँवों और शहरों की जिंदगी का दस्तावेज प्रस्तुत किया है। उन्होंने इस दस्तावेज को यथार्थ की उस गाढ़ी रोशनाई से लिखा है, जिसकी इबारत को मुकम्मल पढ़ पाना और पचा पाना आसान बात नहीं। यह वह इबारत है जो पढ़ने वाले को विक्षुब्ध बेचैन और परेशान तो करती ही है साथ ही उसे अपनी और देश की नियति के बारे में संजीदगी से सोचने को विवश भी करती है। वे अपने रचनाकर्म के माध्यम से आजादी के बाद के विपर्यय और बिडम्बनाओं से भरे कालखंड को अपनी कलम से बांधते और साधते हैं। समय को उसके सारे तेवरों में उसके असली चेहरे के साथ अपनी सर्जना में उजागर करते हैं। इस संबंध में किसी भी दबाव के तहत समझौता करना उनकी प्रकृति के सख्त खिलाफ है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सामाजिक जीवन में असंगतता के साथ-साथ जीवन मूल्यों में भी व्यापक परिवर्तन हुआ। राजनीतिक गतिविधियों के परिणामस्वरूप जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी विसंगतियों, अंधविश्वासों के तत्व प्रविष्ट हो गये। आधुनिकता के इस दौर में पुराने मानदण्ड टूटे तो जरूर लेकिन नये मानदण्डों का निर्माण न होने के कारण लोग परंपरा को आँख मूँद कर स्वीकार करने लगे। परम्परा के समानान्तर किया गया प्रत्येक कर्म विचार से अलग जाता हुआ दिखाई पड़ने लगा, लोगों में विद्वेष भावना बढ़ने लगी। गरीब और गरीब होने को मजबूर होते गये और अमीर वर्ग दिन पर दिन तरक्की

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

की राह पर अग्रसर होता रहा। प्रेम, स्नेह, करूणा, दया, सेवा जैसे मूल्यों के स्थान पर संबंधों में कृत्रिमता व्याप्त हो गयी। आदर्श, नीति, नियम सब अपनी अर्थवत्ता खोकर व्यक्ति चरित्र को इतना जटिल बना चुके हैं कि उसकी पहचान करना मुश्किल है। शुक्ल जी का संपूर्ण लेखन समाज और साहित्य दोनों में इसी प्रकार के आडम्बर के खिलाफ एक सर्जनात्मक अभियान है। तमाम संघर्षों के बाद हमें आजादी मिली भले ही पर, वह हमारी मनोकांक्षा के अनुकूल नहीं रही। फिर भी स्वतंत्रता प्राप्ति के बांद जो बदलाव आया उससे हिन्दुस्तान के शहर और गाँव वैसे नहीं रहे, जैसे वे आंजादी के पहले थे। परिवर्तन तो प्रकृति का अत्यावश्यक गुण है, ये बदलाव आजादी के बाद कुछ तो विकास और प्रजातंत्र को नई भूमिका के चलते आया और कुछ समय के अपने दबावों के तहत। जमींदारी प्रथा समाप्त हुईतो कल के जमीदार गाँवों की उसी जमीन पर लबादे बदलकर शक्ति के नये केन्द्रों के रूप में उभरे। लम्पटता और धूर्तता, मनमानी तथा बेईमानी के अनेकों तरीके उन्होंने ढूँढ निकाले। पुराने सूदखोर महाजनों की जगह बैंकों ने ले ली और अफसरशाही तथा नौकरशाही के रूप में साधारण आदमी को लूटने खसोटने वाले गिरोह जुड़े, उबरे और उजागर हुए। सामाजिक पारिवारिक रिश्तों और नाते संबंधों में भी इसका दुष्प्रभाव दिखाई पड़ा जो माननीय मूल्यों से रहित था। श्रीलाल शुक्ल ने अनेक जगहों पर आजादी के पहले व बाद के समाज व ग्राम्य जीवन में आगे इन बदलावों को रेखांकित करते हुए यह स्पष्ट किया है कि किस प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद गाँवों की जिन्दगी पहले की अपेक्षा जटिल और दूभर हो गई है।

आज के इस बदलते हुए ग्रामीण समाज का चित्रण शुक्ल जी के उपन्यासों कहानियों और निबंधों में सजीव रूप में अंकित है। उन्होंने गाँवों और शहरों की जिन्दगी में व्याप्त विषमताओं को उसके मूल तक जाकर कुरेदा है। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस प्रकार के अभूतपूर्व चित्रण में सहायक बनी है उनकी अनुभव सम्पदा जो उन्होंने गाँवों और शहरी जीवन से अपने घनिष्ठ संपर्क के चलते और प्रशासनिक सेवा के तहत नौकरशाही के समूचे तंत्र से अपनी निकटता के परिणामस्वरूप अर्जित की है। यहाँ श्रीलाल की रचना दृष्टि पर विचार करना असंगत न होगा क्योंकि इस संबंध में उनकी आलोचना इस बात को लेकर अक्सर होती रही है कि नकारात्मक, निषेधमूलक, लंपटता, धूर्तता, मक्कारी और मूल्यहीनता के अलावा उनके कथाकार को गाँवों की जिन्दगी में और सुन्दर नहीं दिखलाई पड़ा है। परन्तु हम ध्यान से देखें तो उनके रचना संसार में सब कुछ नकारात्मक या निषेधात्मक ही नहीं है। वे मानवीय संवेदना को रूपांत्रित करने वाले कथाकार हैं। इसे प्रस्तुत करने का इनका माध्यम अलग है, इसका कारण कदाचित यह है कि शुभ और सुन्दर जब वर्तमान समय में दब या ढ़क से गये हैं तो उसे

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

सीधे या अभिधात्मक ढंग से प्रस्तुत नहीं किया जा सकतां इसलिए ये वक्रता का सहारा लेते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी कहा है कि प्रच्छन्ता का उद्घाटन कवि-कर्म का एक मुख्य अंग है। ज्यों-ज्यों सम्यता बढ़ती जायेगी त्यों-त्यों कवियों के लिए यह काम बढ़ता जायेगा।2 उपरोक्त उद्धरण जितना कवि-कर्म के लिए सत्य है उतना ही साहित्य की अन्य विद्या के लिए भी। सभ्यता के विकास के साथ-साथ जब छल-कपट का अंधकार बढ़ता जा रहा है तो उसे सीधे ढंग से नहीं प्रस्तुत किया जा सकता। शुक्ल जी इस प्रच्छन्नता के उद्घाटन के लिए टेढ़े-मेढ़े रास्ते का चुनाव करते हैं जो भाषा के माध्यम से व्यंग्य का रूप अख्तियार करती है।

प्रख्यात आलोचक डॉ. नामवर सिंह उनकी रचना प्रक्रिया के बारे में लिखते हैं कि जब लेखक विदग्ध होगा- उसका हृदय विशेष रूप से दम्भ होगा, अत्यन्त जला हुआ होगा तो उसकी जबान टेढ़े-मेढ़े ही चलेगी और उसकी भाषा में विशेष प्रकार की भंगिमा होगी। यह आकस्मिक नहीं है कि श्रीलाल शुक्ल बार-बार जोर देकर व्यंग्य को 'भंगिमा' कहते हैं। फिर भी श्रीलाल शुक्ल की भाषा की प्रशंसा करने वाले भूल जाते है उस अदर के कोठे को, जहाँ से स्वर निकलते हैं।3 इस प्रकार देखा जाय तो सामाजिक कुरूपताओं व विसंगतियों से 'विदग्ध' लेखक का व्यंग्य जितना बेधक होगा, लहजा भी उतना ही तिलमिला देने वाला होगा। व्यंग्य की मारक शक्ति जितनी प्रखर होगी, उसे उकसाने वाली माननीय करुणा तथा संवेदना भी उतनी ही सघन तथा संश्लिष्ट होगी।4 श्रीलाल शुक्ल की रचनाओं में सिर्फ व्यंग्य पर ही निगाह केन्द्रित करना उस तत्व को नजरअन्दाज करना होगा जो आद्यंत उनकी रचनाओं में विद्यमान है। यह तत्व है मानवीय संवेदना तथा करूणा जिसके चलते वे कमजोर विपन्न व वंचित लोगों के साथ वैचारिक रूप से प्रतिबद्ध रहे हैं। दुनिया का चित्रण वे तमाशा के रूप में नहीं करते। उनकी अपनी खोजी-रची दुनिया में गहरी हिस्सेदारी है जिसकी बुनियादी नैतिकता दूसरों पर फैसला देने की नहीं है, उनके साथ शामिल होने और साझा करने की है।

शुक्ल जी हिन्दी के उन विरल लेखकों में से हैं जिन्होंने अपने रचनाकर्म के माध्यम से शुद्धता के पाखंड की लगातार पोल खोली है। स्वाधीनता और लोकतंत्र की जिस प्रतिज्ञा ने नये राष्ट्र को जन्म दिया उसकी नीचता और सड़ध को उन्होंने अपनी रचनाओं व उद्गारों द्वारा बखूबी व्यक्क्त किया है। उनका कथाकार रूप भारत की अधिकांश जनता अर्थात् ग्रामीण जन से सघन और संश्लिष्ट रूप से जुड़ा है। ग्रामीण जीवन के सुंदर और असुन्दर पहलुओं को उन्होंने इतनी अंतरंगता से जाना-समझा-देखा और भोगा है कि गाँव उनके लिए किसी भी तरह के रोमानी सम्मोहन से अलग इतने प्रकृत और सहज है कि उनकी वास्तविकता छवि पर किसी भी तरह का आरोप उन्हें स्वीकार्य नहीं है। यह उनके

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

ग्रामीण जीवन के प्रति गहरे व आत्मीय लगाव का द्योतक है। यही कारण है कि वे अपने रचनाकर्म में यथार्थ और यथार्थ चित्रण के प्रति इतने आग्रही हैं कि गाँवों के प्रति अपनी दृष्टि या दृष्टिकोण में किसी प्रकार के अवांछित आग्रह को दृढ़ता पूर्वक अस्वीकार कर देते हैं। कहना न होगा कि 'अज्ञातवास', 'रागदरबारी', 'पहला पड़ाव', 'विश्रामपुर का संत', 'राग विराग' व 'जहालत' के पचास साल' जैसी रचनाएँ पूरे स्वातंत्र्योत्तर सामाजिक व राजनीतिक परिवेश को अपने में समाये हुएहैं। जो हमें श्रीलाल शुक्ल के गहन मानवीय संवेदना सम्पन्न रचनाकार होने का भी पता देती है।

सन्दर्भ

1. सं. अखिलेश - शुक्ल श्रीलाल की दुनिया. पृ. 137
2. शुक्ल आचार्य रामचन्द्र - चिंतामणि, पृ. 79
3. सं. सिंह नामवर - शुक्ल श्रीलाल, जीवन ही जीवन, पृ. 13
4. वही पृ. 13

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.